Nāsadīyam
A Multi-Disciplinary National Research Journal (Annual)
Peer Reviewed/Refereed
Available online at: https://nasadiyam.dmmkkr.ac.in/
Volume 2, Issue 1 (Jan – Dec), 2023, Pp 12-21

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के काव्य में व्याप्त मानवीय-चेतना

डॉ० सीमा सिंह
सहायक प्रवक्त्री (हिन्दी विभाग)
दयानंद महिला महाविद्यालय
कुरुक्षेत्र, हरियाणा, भारत
ईमेलः- seemasingh0105@gmail.com
दूरभाषः 9416935505

सारांश

निराला जी एक साहित्यकार के रूप में न केवल छायावाद के बल्कि संपूर्ण हिंदी साहित्य में संचेतना, मानवीयता और संवेदनाओं के कवि कहे जा सकते हैं। उन्होंने हिंदी भाषा में विराट साहित्य का सृजन किया । उनके इस रचना कर्म का सीधा संबंध उनके व्यवहारिक ज्ञान, चिंतन-मनन, अनुभव और काव्य के उद्यात स्वरूप से है। उनके लेखन और चिंतन में एक समरसता दिखलाई देती है, जो न केवल उनके व्यवहारिक एवं मानवतावादी-पक्ष की द्योतक है बल्कि उनकी कथनी और करनी में एकरूपता की प्रतीक भी है। जीवनभर उनका अविराम संघर्ष और साहित्य-जगत में निरंतर विरोध का सामना करने से उनमें जो एक आत्म-निष्ठा उत्पन्न हो गई थी, उसी का परिचय हम उनकी साहित्यिक- दृष्टि में पाते हैं। कहा जाता है कि कभी-कभी यह गर्व, व्यक्ति की सीमा पार कर इतना सामान्य हो जाता है कि हम सब उसे अपना, प्रत्येक साहित्यकार का या सारे साहित्य का गर्व मान सकते हैं। प्रस्तुत शोध - पत्र में निराला जी की विभिन्न कविताओं में प्रस्तुत हुए मानवीय-चेतना व मूल्यों का वर्णन करने का प्रयास किया गया है। वैसे तोउनके द्वारा विराट साहित्य का निर्माण हुआ है, परंतु यह शोध-पत्र उनके द्वारा रचित प्रमुख कविताओं पर ही केंद्रित रखा गया है ।

कुंजी शब्द

मानवीय-चेतना, मानवीय-मूल्य, संचेतना, संवेदना, साहित्य-सृजन, व्यवहारिक-ज्ञान, चिंतन-मनन, क्रांतिकारी, अवहेलना, चतुर्यामी, स्वच्छंदता, ब्रह्मवाद, हृदयाग्रही ।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' हिंदी साहित्य में असाधारण व्यक्तित्व के कवि रहे हैं। वे साहित्यकार के रूप में न केवल छायावादी काल में बल्कि संपूर्ण हिंदी साहित्य में, चेतना, मानवीय-मूल्यों, संवेदनाओं, दर्शन और विद्रोह के कवि कहे जा सकते हैं। वे हिंदी भाषा के विराट पुरुष हैं और उन्होंने विशाल साहित्य का सृजन करके मातृभाषा हिंदी का भण्डार भावोंभिव्यक्ति की अनुपम निधि से भरा है। उनके इस रचना-कर्म का सीधा संबंध उनके व्यवहारिक-ज्ञान, चिंतन-मनन, अनुभव और काव्यकेउद्यात स्वरूप से है। उनके लेखन और चिंतन में एक समरसता दिखलाई देती है, जो न केवल उनके व्यवहारिक एवं मानवतावादी पक्ष का द्योतक है बल्कि उनकी कथनी और करनी में एकरूपता का प्रतीक भी है। उनका अविराम संघर्ष, साहित्य-जगत में उनका निरंतर विरोध होने और उसका सामना करने से उनमें जो एक आत्म-निष्ठा उत्पन्न हो गई थी, उसी का परिचय हम उनकी साहित्यिक-दृष्टि में पाते हैं । उनका दार्शनिक और व्यवहारिक पक्ष इतना उज्ज्वल है कि हम सब उसे सारे समाज और सारे साहित्य का गर्व मान सकते हैं। निराला का संपूर्ण जीवन दुखों, विपत्तियों और पीड़ाओं से भरा हुआ है। उनके परिजनों की बात करें तो उन्होंने अपने पिताजी, माताजी, और पत्नी के रूप में प्रियजनों के साथ परिवार के अन्य सदस्यों को सन् 1919 ईस्वी में आई महामारी में गवां दिया था । अपनी प्राणों से प्रिय पुत्री सरोज को उसकी

लम्बी बीमारी के बाद और अपनी कमजोर आर्थिक स्थिति की असहायता के चलते सन् 1935 ईस्वी में खो दिया। यही नहीं, एक कवि और साहित्यकार के रूप में भी उन्हें बड़े साहित्यिकों से मिली उपेक्षा और अवहेलना को झेलना पड़ा, परन्तु इतना होने के बावजूद भी उन्होंने जीवन के सुख -दुख को लेकर अपने लेखन में बहुआयामी और चतुर्यामी दृष्टि का परिचय दिया है। उनके साहित्य में नैतिकता और मानवता अपने उद्दात रूप में विद्यमान है। निराला के काव्य में उनके द्वारा रचा गया प्रत्येक शब्द या कविता की पंक्तियां जनसामान्य से तादात्म्य स्थापित करते हुए समाज में नये मानवीय-गुणों, चेतना और मूल्यों की स्थापना करती है।

निराला जी का जीवन अनेक अभावों एवं विपत्तियों से पीड़ित रहा, किंतु इन्होंने किसी विपत्ति के सामने झुकना स्वीकार नहीं किया। अभावों की तीव्र एवं मर्मांतक व्यथा को झेलते हुए ये लगातार साधना में तल्लीन रहे। मगर देखा जाए तो कब तक कोई इस तरह जी सकता है ? निराला का मन और बुद्धि तो संघर्षों की उपेक्षा करते हुए अविचलित रहे, किंतु उनकी चेतना के भीतर जैसे कुछ घुल रहा था।उनके जीवन के अंतिम वर्ष जहां उनकी चेतना के अथक अविचल संघर्ष की कहानी कहते हैं, वहीं उनके जीवन की विपत्तियां और व्यथाओं की दुर्निवार शक्ति को भी व्यंजित करते हैं। सन्1916 ई. से लेकर 1958 ई. तक निराला जी निरंतर काव्य साधना में तल्लीन रहे।

निराला जी का शारीरिक गठन अत्यंत सुव्यवस्थित एवं आकर्षक था।उनका कद छह फुट से कुछ अधिक था, भरा हुआ शरीर था, रंग गेहुंआ था, आंखों में गांभीर्य था।लंबे-लंबे बाल इनको एक साधक ऋषि की भूमिका में प्रस्तुत करते थे। आंखों में एक दार्शनिक की पिपाशा झांकती हुई दिखाई देती थी। यही कारण है कि श्रीमती सरोजिनी नायडू ने जब इन्हें देखा तो उन्हें वह एक ग्रीक दार्शनिक समझ बैठीं। इनके शरीर के सुव्यवस्थित विन्यास को देखकर एक ग्रीक महिला ने इन्हें ग्रीक देवता 'अपोलो' का अवतार बताया था।[1]

निराला का व्यक्तित्व आरम्भ से ही विद्रोही रहा और यही चेतना उनके साहित्य में भी दिखाई देती है। उनकी यह क्रांति-भावना सामान्य भारतीय-जन, जो सदियों से पददलित हैं तथा जिनके अधिकारों को हमेशा से कुचला गया है, उन्हें विद्रोह करने के लिए प्रेरित करती है। उनकी यह जन-संवेदना 'बादल-राग' कविता के माध्यम से स्पष्ट हुई है। 'बादल' विप्लव का प्रतीक है और दीन -हीन, जर्जर, विपन्न, त्रस्त व सदियों से प्रताड़ित पीड़ित और शोषित लोगों की मुक्ति का आधार भी है -

‘यह तेरी रण-तरी,
भरी आकांक्षाओं से,
घन, भरी -गर्जन से सजग, सुप्त अंकुर
उर में पृथ्वी के, आशाओं से नवजीवन की,
ऊंचा कर सिर, ताक रहे हैं,
ए विप्लव के बादल!
फिर -फिर’।[2]

निराला का 'बादल' सामान्य बादल नहीं है बल्कि वह क्रांति के मूलभूत गुणों से संपन्न विप्लव-बादल है और अपनी गर्जना से शोषक वर्ग में उथल-पुथल मचा देता है। इसकी गूंज से पूंजीपतियों का शोषण-तंत्र बिखरने लगता है।

निराला केवल क्रांति-चेतना के ही कवि नहीं है और न ही उनका दर्शन कोरा दर्शन है, वह उनकी हृदय की करुणा और सहानुभूति का केंद्र है। इसमें मानवता का स्रोत बहता हुआ दिखाई पड़ता है। उन्होंने 'भिक्षुक', 'विधवा', 'वह तोड़ती पत्थर' इत्यादि कविताओं में समाज के इन उपेक्षित वर्गों का बड़ा ही मार्मिक और करुणाजनक चित्र खींचा है-

'विधवा' के बारे में लिखते हुए वह कहते हैं-

'वह टूटे तरु की छुटी लता-सी दीन,
दलित भारत की ही विधवा है।'[3]

शब्दों से चित्र अंकित करने में निराला का कोई सानी नहीं है। वह भिक्षुक का चित्र खींचते हुए कहते हैं-

'वह आता
दो टूक, कलेजे के करता
पछताता पथ पर आता।
पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक,
मुट्ठी भर दाने को-भूख मिटाने को,
मुंह-फटी पुरानी झोली को फैलता,
पछताता पथ पर आता।'[4]

निराला जी अपने भावों की अभिव्यक्ति करते हुए जन-सामान्य की पीड़ाओं से इतने पीड़ित हो जाते हैं कि वह ईश्वरीय सत्ता पर भी प्रश्न चिन्ह लगा देते हैं-

'कौन उसको धीरज दे सके,
दुःख का भार कौन ले सके?
यह दुःख, वह जिसका नहीं कुछ छोर है,
दैव, अत्याचार कैसा घोर और कठोर है!
क्या कभी पोंछे किसी के अश्रु जल?
या किया करते रहे सबको विकल?
ओस कण-सा पल्लवों से झर गया
जो अश्रु, भारत का उसी से सर गया।'[5]

निराला ने 'दिल्ली' नामक कविता में देश के अतीत गौरव के साथ-साथ देश की तात्कालिक दुर्दशा का चित्रण एक गंभीर प्रभाव से अभिव्यक्त किया है-

'क्या यह वही देश है
भीम, अर्जुन आदि का कीर्तिक्षेत्र,
चिरकुमार भीष्म की पताका ब्रह्मचर्य-दीप्त
उड़ती है आज भी जहां के वायुमंडल में ,
उज्जवल अधीर और चिरनवीन ?

श्रीमुख से कृष्ण के सुना था जहां भारत ने
गीता गीत -सिंहनाद
मर्म वाणी जीवन-संग्राम की
सार्थक समन्वय ज्ञान-कर्म-भक्ति-योग का ?'[6]

प्रसिद्ध आलोचक और निबंधकार राम विलास शर्मा ने निराला को बहुत गंभीरता से मूल्यांकित किया है, वो लिखते हैं, 'निराला एक दार्शनिक कवि हैं। कुछ दर्शनशास्त्र उन्होंने किताबों में पढ़ा था, कुछ रामकृष्ण मिशन के साधुओं के साथ रहते हुए सुना था,बहुत कुछ अपने जीवन के विषाक्त अनुभवों में स्वयं देखा था। अनुभवों में जो देखा था,वह पढ़े और सुने हुए दर्शनशास्त्र से हमेशा मेल ना खाता था। इसलिए उनके काव्य में सुव्यवस्थित दार्शनिक चिंतन की जगह कहीं-कहीं परस्पर विरोधी विचार भी मिलेंगे, जिनमें एक तरह के विचारों का स्रोत है पढ़ा और सुना हुआ दर्शनशास्त्र,और दूसरी तरह के विचारों का स्रोत है उनका अपना अनुभव-जन्य ज्ञान।चाहते वह यही हैं कि चारों ओर उन्हें ब्रह्म का आनंदमय प्रकाश दिखाई दे।'[7]इस प्रकार की कल्पना करके वह लिखते हैं -

'गई निशा वह,
हंसी दिशाएं,
खुले सरोरुह,
जगे अचेतन।'

किंतु अपने चारों ओर विरोध का वातावरण देखकर उन्हें दिखाई देता है अंधेरा जिसमें -

'फिर सुना,
हंस रहा अट्टहास,
रावण खलखल ।'[8]

निराला उल्लास, विषाद, संघर्ष और क्रांति के कवि हैं। इस क्रांति का लक्ष्य स्वाधीन और शोषण मुक्त समाज है। भारत में तरह-तरह के क्रांतिकारी हुए हैं, किंतु भारत में क्रांति नहीं हुई। प्रेमचंद और निराला का ऐतिहासिक महत्व यह है कि, उन्होंने ये समझा कि भारतीय स्वाधीनता-आंदोलन की धुरी किसान हैं और साम्राज्यवाद के मुख्य समर्थक, सामंतों के खिलाफ जमीन पर अधिकार करने के लिए किसानों का संघर्ष ही उस क्रांति का सुत्रपात कर सकता है -

'जीर्ण बाहु हैं शीर्ण-शरीर
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ए विप्लव के वीर,
चूस लिया है उसका सार
हाड़ मात्र ही है आधार,
ए जीवन के पारावार।'[9]

संसार के किसी भी भाग में ऐसे कवि बहुत कम होंगे जो रचना-स्तर के अनेक रूपों को साथ-साथ वहन कर सकें और लगातार अनेक मुखी कविताओं की रचना करने में समर्थ हों। निराला ऐसे ही कवि थे।इसका प्रमुख कारण यही था कि निराला ने जीवन को एक ही साथ अनेक स्तरों पर जिया। उनका अंत:संगीत जितना प्रखर है

उतना ही हिंदी कविता को परंपरागत काव्य-अभिजात्य से मुक्त करने का प्रयास भी। परंपरा से सधा हुआ, एक स्वतंत्र जीवन-दृष्टि वाला विद्रोही काव्य-दर्शन ही उनकी काव्य-रचना का मूल मंत्र है।[10]सूर्यकांत त्रिपाठी निराला सनातन और नवीन भारतीय संस्कृति के बड़े भक्त हैं। तुलसीदास जी के प्रति श्रद्धांजलि प्रकट करने के लिए उन्होंने 'तुलसीदास' नाम के सुंदर काव्य के आरंभ में भारतीय आर्य जाति के पददलित होने पर बड़ा क्षोभ प्रकट किया है।[11]

छायावादी कवियों के गंभीर लेखन के विपरीत निराला की रचनाओं में हास्य और व्यंग्य की मात्रा भी काफी है। इस तरह की रचनाओं में 'कुकुरमुत्ता' का स्थान अन्यतम है। समय-समय पर वह छायावाद के विरोधियों पर ,जनता को धोखा देने वाले राजनीतिज्ञों पर, देश की प्रगति रोकने वाले तरह-तरह के निहित स्वार्थों पर व्यंग्य करते ही थे, किंतु 'कुकुरमुत्ता' जैसी रचनाओं में वह कुछ छायावादी मान्यताओं पर भी व्यंग्य करते हैं, जो उन्हें प्रिय तो थी पर उन्हें संशय की निगाह से वह पहले भी देखते थे। 'कुकुरमुत्ता' ब्रह्मा के समान अनेक रूप धारण करता है। वही विष्णु का सुदर्शन चक्र है, यशोदा की मथनी है, सुबह का सूरज और शाम का चांद है। 'कुकरमुत्ता' अगर ब्रह्म के समान व्यापक नहीं होता तो उसमें कोई गोते कैसे लगाएगा,उसके किनारे खड़े होकर टुकर-टुकर ताकेगा कैसे? 'कुकरमुत्ता'के प्रच्छन्न व्यंग्य स्वयं निराला की ब्रह्म संबंधी विचारधारा पर आधारित हैं।[12]

'विष्णु का मैं ही सुदर्शन चक्र हूं।
काम दुनिया में पड़ा ज्यों वक्र हूं।
उल्ट दे मैं ही जसोदा की मथानी
और भी लंबी कहानी -
तीर से खींचा धनुष मैं राम का।
काम का -
पड़ा कंधे पर हूँ हल बलराम का।
सुबह का सूरज हूं मैं ही
चांद में ही शाम का।
कलजुगी मैं ढाल,
नाव का मैं तला नीचे और ऊपर पाल।[13]

इसी प्रकार निराला ने कविता को भी स्वच्छंद करने के लिए और अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए जिस छंद को प्रमुखतया से चुना, उसे मुक्त छंद कहा जाता है। निराला ने मुक्त छंद का निर्भय प्रयोग किया है। हिंदी साहित्य को उनकी यही मौलिक देन है। मुक्त छंद की महत्ता के संबंध में निराला ने लिखा है - "मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है।मनुष्य की मुक्ति कर्मों के बंधन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छंदों के शासन से अलग होना।"[14]

इस कथन के समर्थन में निराला ने 'जूही की कली' की आरंभिक पंक्तियाँ अवतरित की हैं और विवेचन प्रस्तुत किया है, वह लिखते हैं-

'विजन - वन बल्लरी पर
सोती थी सुहाग-भरी

स्नेह-स्वप्न-मग्न, अमर-कोमल तनु-तरुणी
जूही की कली,
दृग बंद किए -शिथिल पत्रांक में।[15]

निराला आगे लिखते हैं कि "यहां सोती थी सुहाग भरी"आठ अक्षरों का एक छंद आप ही आप बन गया है। तमाम लड़ियों की गति कवित्त-छंद की तरह है । निराला तो काव्य का विकास ही छंद के बंधन से मुक्ति की स्थिति में मानते थे जबकि अन्य लोगों ने इसका घोर विरोध किया था। उन्होंने मुक्त छंद के विरोध में उसको खंड-छंद, केंचुआ-छंद, कंगारू-छंद और रबर-छंद इत्यादि न जाने कितने नाम दिए ।[16]

निराला के मुक्त छंद पर अपने विचार रखते हुए रामयतन सिंह का विचार है,"निराला जी ने आंगिक स्फूर्ति ,आंतरिक शक्ति और निज का अभिमान लेकर उसमें अपने व्यक्तित्व की छाप लगा दी थी और कविता में इतना आत्मविश्वास उड़ेल दिया कि युगों से आती हुई सुगम छंदों की पिटी-पिटाई राह छोड़कर वह अकड़ कर अतुकांत भाव प्रवाहों के कंटककीर्ण मार्ग पर चल पड़ी। पथ के शूल फूल हो गए । छंदों की कारा से इस उद्धार के लिए कविता-कामिनी निराला की सदैव ऋणी रहेगी ।[17]

निराला जी ने भाषा को लेकर भी बडे स्वच्छंद दृष्टिकोण का परिचय दिया है। वैसे तो उनकी भाषा संस्कृत-गर्भित है, किंतु उसमें उर्दू व फारसी के शब्दों का नितांत बहिष्कार नहीं है। उनके काव्य में ओज की मात्रा अधिक है,और कुछ लोगों का ख्याल है कि उनकी भाषा उनके गीतों के लिए भारी पड़ जाती है; अर्थात उनका संगीत उनके संस्कृत-गर्भित ओजपूर्ण शब्दों को वहन करने में असमर्थ दिखाई देता है। यह बात कहीं-कहीं ही है, सर्वत्र नहीं।[18]

जिस समाज में नारी के रूप में जन्म लेना ही पाप माना जाता हो, जिसमें नारी को कोई सामाजिक और राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहो, जिसमें वह संपत्ति की हकदार न मानी गई हो, जिसमें पति की मृत्यु के बाद उसे जिंदा जला देने का धार्मिक विधान रहा हो और जिसमें माता-पिता द्वारा नवजात पुत्री की हत्या तक कर देने की परंपरा चली आती हो, उसमें निराला का पत्नी-प्रेम और पुत्री-प्रेम की कविता लिखना, पत्नी की मुक्ति के लिए अपनी एक आंख तक निकाल कर देवता को चढ़ाने को उद्यत हो जाना और पुत्री की मृत्यु पर विलाप करना तथा अपने पितृत्व की निरर्थकता का एहसास करना, निश्चय ही एक मानवीय क्रांतिकारी कार्य था-

'धन्ये, मैं पिता निरर्थक था
कुछ भी तेरे हित में न कर सका !
जाना तो अर्थागमोपाय,
पर रहा सदा संकुचित -काय,
लखकर अनर्थ आर्थिक-पथ पर
हारता रहा में स्वार्थ-समर ।'[19]

इसी संदर्भ में नंदकिशोर नवल लिखते हैं कि 'सरोज-स्मृति' कविता का महत्व हिंदी में शोकगीति के अभाव की पूर्ति की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि एक अन्य दृष्टि से भी है। वह दृष्टियह है कि यह कविता निराला ने अपनी पुत्री की मृत्यु पर लिखी और इसमें अपने जीवन के लिए पुत्री को वह महत्व दिया जो उनसे पहले और किसी कवि ने नहीं दिया था। उन्होंने अपने संपूर्ण कवि जीवन में दो महान कविताओं की रचना की 'सरोज -स्मृति'

और 'राम की शक्ति-पूजा'। इनमें से पहली कविता पुत्री-प्रेम की कविता है और दूसरी पत्नी-प्रेम की। नारी उनके साहित्य का एक मुख्य विषय है और नारी-मुक्ति उनकी विचारधारा का एक मुख्य लक्ष्य।[20]उनके इस विलक्षण, प्रखरऔर क्रांतिकारी स्वरूप पर डॉ0 रामविलास शर्मा ने लिखा है -

‘यह कवि अपराजेय निराला,
जिसको मिला गरल का प्याला,
ढहा और तन टूट चुका है,
पर जिसका माथा न झुका है,
नीली नसें खींची है कैसी,
मानचित्र में नदियां जैसी,
शिथिल त्वचा,ढलढल है छाती,
लेकिन अभी संभाले थाती,
और उठा विजय -पताका
यह कवि है अपनी जनता का।’[21]

महादेवी वर्मा ने निराला को राखी बंद भाई बनाया था, वो लिखती हैं कि निराला की दृष्टि में दर्प और विश्वास की धूप-छांही द्वाभा है। इस दर्प का संबंध किसी हल्की मनोवृति से नहीं और न उसे अहं का सस्ता प्रदर्शन ही कहा जा सकता है।अविराम संघर्ष और निरंतर विरोध का सामना करने से उनमें जो एक आत्म-निष्ठा उत्पन्न हो गई है, उसी का परिचय हम उनकी दृप्त-दृष्टि में पाते हैं। कभी-कभी यह गर्व, व्यक्ति की सीमापार कर इतना सामान्य हो जाता है कि हम उसे अपना, प्रत्येक साहित्यकार का या सारे साहित्य का मान सकते हैं। इसी से वह दूर्वह कभी नहीं होता।[22]

डॉ विजय पाल सिंह अपनी एक पुस्तक में निराला जी के सम्मान में लिखते हैं कि निराला ने मानवतावादी-चेतना को अपने काव्य का प्रमुख आधार बनाया और इस दृष्टि से वे छायावादी युग के सर्वश्रेष्ठ कवि कहे जा सकते हैं। निराला जी जीवनभर संघर्ष करते रहे और साहित्य जगत में नित्य नवीन खोज और आविष्कार के कारण ही वे आनेवाले साहित्यकारों के लिए प्रेरणा स्रोत बन गए। मानव एवं मानवेतर जगत के प्रत्येक क्षेत्र में वे नित्य नवीन परिवर्तन की आकांक्षा करते हैं -

‘नव गति लय, ताल छंद नव,
नवल कंठ, नव जलद मन्द्र रव
नव नभ के नव विहग-वृन्द को
नव पर नव स्वर दे!’[23]

निराला जी की कविता उनकी जीवन साधना का प्रतिफल है। इसलिए उनके काव्य में जीवन के बाह्य एवं आंतरिक रूपों के अनेक चित्र विविध शैलियों में रूपायित किए गए हैं। प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों के साथ आधुनिक समाज के नवीन जीवन मूल्यों का विराट चित्रफलक प्रस्तुत कर निराला जी ने हिंदी कविता को बहुत आगे बढ़ा दिया है। निराला जी के काव्य में नैतिकता के प्रति एक आग्रह भी दिखाई पड़ता है जिसके फलस्वरूप यथार्थवादी बौद्धिकता के साथ ही उनमें आदर्शवादी भावुकता का एक विशिष्ट संतुलन भी पाया जाता है। निराला

जी ने जीवन में न जाने कितने अंतर्विरोधों को बड़े ही सहज ढंग से झेला है और उनके काव्य में भी वे प्रवृतियां विद्यमान हैं। उनका काव्य प्रगति और विकास का परिचायक है।[24]

बाबू गुलाब राय अपने साहित्य हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास में निराला जी के बारे में लिखते हैं - "आप बड़ी स्वतंत्र प्रकृति के थे और अपनी प्रकृति के अनुरूप ही कविता-कामिनी को स्वच्छंदता देकर आपने उसका स्वाभाविक संगीतमय सौंदर्य उद्धाषित करने का प्रयत्न किया है। आपकी स्वच्छंद कविताएं कुछ तुकांत हैं, कुछ अतुकांत। आप दार्शनिक भी हैं और कवि भी। आप में बुद्धिवाद और हृदयवाद, दोनों का ही सुखद सम्मिलन है। आप ब्रह्मवाद से प्रभावित अवश्य हैं किंतु ब्रह्मलीन होकर अपने व्यक्तित्व को खो देने के पक्ष में नहीं हैं। भक्तों की भांति आप ईश्वर के साथ चंद्र-चकोर का-सा ही संबंध रखना चाहते हैं । आपकी लिखी हुई 'पंचवटी -प्रसंग' नाम की कविता में लक्ष्मण जी कहते हैं-

' नहीं जानता मैं, भक्ति रहे काफी है।
सुधाधर की कला अंशु यदि बनकर रहूं
तो अधिक आनंद है,
अथवा यदि होकर कुमुद नैश गंध
पीता रहूं सुधा इंदु-सिंधु में बरसाती हुई
तो सुख मुझे अधिक होगा।'[25]

निराला का मन प्रकृति में भी अत्यंत उन्मुक्त होकर रमा है। उन्होंने प्रकृति के विभिन्न रूपों को विशेष सुंदरता के साथ प्रस्तुत किया और उसके उन्मुक्त रूप से तो निराला को विशेष लगाव रहा है। उनके बादल-प्रेम के संबंध में डॉक्टर रामविलास शर्मा ने लिखा है, ' इन्होंने बंगाल और अवध दोनों ही प्रांतों की बरसात देखी है । शायद कोई भी हिंदी कवि मूसलाधार पानी में इतना न नहाया होगा। बाहर घूमते हुए बारिश आ गई तो इन्हें घर लौटने की कभी जल्दी नहीं होती। बादल घिरे हों, तो भी दोस्तों को यह समझाते हुए कि पानी बरसने की जरा भी शंका नहीं है, वह उनके साथ घूमने चल देते थे।[26] प्रकृति के माध्यम से उन्होंने अपने एकाकीपन को भी प्रकट किया है। 'संध्या-सुंदरी' नामक कविता में वह लिखते हैं -

'अर्धरात्रि की निश्चलता में हो जाती जब लीन
कवि का बढ़ जाता अनुराग
विरहाकुल कमनीय कंठ से
आप निकल पड़ता तब एक विहाग।'[27]

प्रकृति के माध्यम से कुकरमुता में उनके व्यंग्य सर्व प्रसिद्ध हैंही-

'अबे! सुन बे गुलाब
भूल मत जो पाई खुशबू रंगो आब
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा कैपिटलिस्ट[28]

निराला ने मानव में पूर्ण विश्वास जतलाया है। वह उसकी संम्पूर्णता का भक्त है, मानवका हृदय कितना विशाल, कितना गंभीर होता है इस पर विवेचन करते हुए उन्होंनेकहा है कि मनुष्य लगातार पीड़ा भोगता रहता है,

अपने मन की भीष्म-वेदनाओं को भी सहन करता रहता है, वहमात्र संसार की ओर देखता हैऔर संत्रास सहता है।ऐसे वर्ग के उत्थान के लिए प्रयत्ननशील निराला उन्हें उनके स्वत्व की जानकारी दिलाते हुए कहते हैं-

‘पशु नहीं वीर तुम
समर शूर -क्रूर नहीं
कालचक्र में हो दबे
आज तुम राजकुंवर।
महामंत्र ऋषियों का
अणुओं परमाणुओं में फूंका हुआ,
तुम हो महान,
तुम सदा हो महान
है नश्वर यह दीन-भाव
कायरता कामपरता,
ब्रह्म हो तुम
पदरज भर भी है नहीं पूरा यह विश्व भार,
जागो फिर एक बार।’[29]

निराला जी अपने शारीरिक गठन , जीवन-दर्शन और साहित्य सभी में असाधारण हैं। अर्थात उनमें विरोधी तत्वों की भी सामंजस्यपूर्ण संधि है। उनका विशाल डीलडौल, देखने वाले के हृदय में जो आतंक उत्पन्न कर देता है उसे उनके मुख की सरल आत्मीयता दूर करती चलती है।[30]

अंत में सार रूप से कहा जा सकता है कि निराला ने अपने दर्शन, तत्व-ज्ञान और चिंतन के माध्यम से समाज में एक नई मानवीय-चेतना का विकास किया और उसको अपने काव्य के माध्यम से प्रचारित-प्रसारित किया। मुक्त-छंद के इस आदिपुरुष ने वैदिक साहित्य से लेकर तात्कालिक जीवन के विविध पक्षों को अपनी कविताओं के रूप में पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत कर उन्हें निरंतर साहित्य-सरणी की विराट धारा से सरोबार किया है।

सन्दर्भ सूची

1. चतुर्वेदी,डॉ. राजेश्वर प्रसाद, 1986, निराला और अपरा, विनोद पुस्तक मंदिर , आगरा, पृष्ठ - 9)
2. स्नातक, डॉ. विजयेंद्र, 2010, काव्य पारिजात, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली, पृष्ठ- 50
3. वाशिष्ठ, सं.डॉ. सरिता, 2013, आधुनिक हिंदी कविता, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय प्रकाशन, विधवा कविता, पृष्ठ 40)
4. मलिक,सं.डॉ माया,2011,आधुनिक काव्य-मंजूषा, खाटू श्याम प्रकाशन,भिक्षुक कविता, पृष्ठ-51
5. सिंह,डा विजयपाल, 1972, छायावाद के प्रतिनिधि कवि,विश्वविद्यालय प्रकाशन,वाराणसी, पृष्ठ-39
6. डॉ. नगेन्द्र, 2017, हिन्दी साहित्य का इतिहास ,मयूर पेपरबैक्स, पृष्ठ- 520
7. शर्मा,संपादक रामविलास, 2001, निराला राग-विराग, लोक भारती प्रकाशन, ,पृष्ठ-23-24
8. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, 2010, गीतिका, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ- 56
9. शर्मा,संपादक रामविलास, 2001, निराला राग-विराग, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ-21

10. सिंह,दूधनाथ, 2009,निराला:आत्महंता आस्था, लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ-231
11. अरुण, संपादक - प्रो. विश्वम्भर,2009,हिंदी साहित्य का इतिहास,लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा - 3,पृष्ठ- 222 - 23
12. शर्मा,संपादक रामविलास, 2001, निराला राग-विराग, लोक भारती प्रकाशन, , पृष्ठ-22
13. शर्मा,संपादक रामविलास, 2001, निराला राग-विराग, लोक भारती प्रकाशन, , पृष्ठ-147
14. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, 1978, राजकमल प्रकाशन परिमल पृष्ठ-4(भुमिका)
15. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, 2010, गीतिका, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ-28
16. चतुर्वेदी,डॉ. राजेश्वर प्रसाद, 1986, निराला और अपरा, विनोद पुस्तक मंदिर , आगरा, पृष्ठ- 71
17. भटनागर, डॉ राम रतन, 1973, निराला नव मूल्यांकन, किताबमहलप्रकाशन,पृष्ठ-108
18. राय,बाबू गुलाब, 1998, हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, पृष्ठ -224)
19. नवल,नंदकिशोर, 1993,निराला और मुक्तिबोध, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ - 19
20. नवल,नंदकिशोर, 1993,निराला और मुक्तिबोध, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ - 12 - 13
21. एचटीटीपीकविताकोशडॉटओआरजी (http://kavitakosh.org)
22. वर्मा,महादेवी , 2005,पथ के साथी,राधा कृष्णप्रकाशन,पृष्ठ -54
23. सिंह,डा विजयपाल, 1972,छायावाद के प्रतिनिधि कवि,विश्वविद्यालय प्रकाशन,वाराणसी, पृष्ठ-23
24. सिंह,डा विजयपाल, 1972,छायावाद के प्रतिनिधि कवि,विश्वविद्यालय प्रकाशन,वाराणसी, पृष्ठ-24
25. राय,बाबू गुलाब, 1998, हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, पृष्ठ -222)
26. शर्मा, डॉक्टर रामविलास,2018, राधा कृष्ण प्रकाशन, निराला पृष्ठ-59।
27. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी,1978, राजकमल प्रकाशन परिमल, पृष्ठ-111
28. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी,1969,लोक भारती प्रकाशन, कुकरमुता, पृष्ठ-39
29. निराला, सूर्यकांत त्रिपाठी, 1978, राजकमल प्रकाशन परिमल पृष्ठ -204-205)
30. वर्मा,महादेवी , 2005,पथ के साथी,राधा कृष्णप्रकाशन,पृष्ठ - 53